International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 04-05-2024, Accepted: 27-05-2024, Published: 18-06-2024
Volume 10, Issue 2, 2024, Page No. 20-21

लौटे हुए मुसाफिर और विभाजन की त्रासदी

मुहम्मद महताब खाँ
हिन्दी विभाग, इंटरनेश्नल इंडियन स्कूल, तबुक, सऊदी अरब

सारांश
भारतीय संस्कृति अनेकता में एकता के लिए जानी जाती है। 'वसुधैव कुटुंबकम' हमारे देश की सांस्कृति सोच का अभिन्न अंग रहा है। लेकिन कभी–कभी हमारे अपने ही कुटुंब की नाव तूफान में घिर जाती है। 'लौटे हुए मुसाफिर' भारत के एक ऐसे ही तूफानी दौर की कथा है जब अपने ही कुटुंब में दीवार खड़ी हो जाती है। यह दीवार अपने आप ही नहीं बन जाती बल्कि इसके पीछे अपने स्वार्थ को साधने वाली टोपियों और टीकों की टोलियाँ काम कर रही थीं। धर्म के नाम पर होने वाले विभाजन के पीछे सदैव स्वार्थ और सुविधा की दुर्गंध छिपी होती है। कमलेश्वर एक ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने भारत–पाकिस्तान विभाजन की त्रासदी की गहरी पड़ताल की है। इसके कारण और परिणाम को गहराई से समझा है। इनका उपन्यास 'लौटे हुए मुसाफिर' विभाजन और हिन्दू–मुस्लिम के बीच बढ़ती दूरियों को आधार बनाकर लिखा गया है। यहाँ एक ऐसी बस्ती की कहानी है जिसमें रहने वाले हिन्दू–मुस्लिम दोनों भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते हैं। लेकिन 1945 के बाद विभाजन की परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाने पर दोनों के बीच नफरत की दीवार खड़ी हो जाती है। कुछ असामाजिक तत्वों ने अपना स्वार्थ साधने के लिए इस नफरत को हवा दी। इसके परिणाम स्वरुप विभाजन हुआ और उस बस्ती के मुसलमान भी पाकिस्तान चले गये। लेकिन कुछ साल बाद अपने दुख और उत्पीड़न का बोझ लिए कुछ लोग पाकिस्तान से वापस इसी बस्ती में आ गये। 'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास की यह बस्ती पूरे भारत का प्रतिनिधित्व करती है। यह उपन्यास यह संदेश देता है कि जब तक हम अपने दिलों से नफरत नहीं निकालते, तब तक विभाजन किसी न किसी रुप में होता रहेगा। इसीलिए यह उपन्यास आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

मूल शब्दः भारत–पाकिस्तान विभाजन, साम्प्रदायिकता, नफरत, हिन्दू–मुस्लिम एकता, स्वतंत्रता

कमलेश्वर का यह उपन्यास विभाजन को विषय बनाकर लिखा गया है। जिसमें एक ऐसी बस्ती को कथानक के केन्द्र में रखा गया है। जिसका इतिहास धर्मनिरपेक्षता की ज्वलंत मिसाल रहा था किन्तू आपसी नफ़रत और राजनीति के दुष्प्रभाव में साम्प्रदायिकता का शिकार हो गया था। इस उपन्यास का महत्वपूर्ण कथ्य देश–विभाजन से जुड़ा हुआ है। कमलेश्वर ने विभाजन की घटना के माध्यम से वास्तव में इंसानी रिश्तों के मानवीय संबंधों की खोज की है। इस उपन्यास में ऐसे अंजान और आम जन को कथा का हिस्सा बनाया गया है जो अपनी रोजी–रोटी और सामान्य जीवन की जरूरतों में उलझे थे। किन्तू ऐसे लोग विभाजन की आँधी में उजड़ गए। वे अपने देश से बेहतर की तालाश में पाकिस्तान की ओर चले थे किन्तु न तो वे पाकिस्तान जा सके और न अपनी बस्ती में लौट सके। उपन्यास के अंत में कुछ लोग लौटते हैं किन्तु वे किसान से मज़दूर बन के वापस आए थे। यही उनकी त्रासदी है। 'लौटे हुए मुसाफिर' बेहद सामान्य तरीके से हिन्दू–मुसलमान द्वन्द्व को बहुत तीखे स्तर पर उजागर करता है और विभाजन के निहितार्थ को बेनकाब करता है। ऐसी अंतहीन विभाजन की प्रक्रियाओं और शंकाओं से हम निरंतर घिरते जा रहे है।

लौटे हुए मुसाफिर और विभाजन की त्रासदी

देश विभाजन की त्रासदी को लेकर लिखा गया यह उपन्यास कमलेश्वर की एक महत्त्वपूर्ण कृति है। उपन्यास का पहला ही वाक्य हमें विभाजन की वास्तविकता से परिचित करा देता है ''सिर्फ नफ़रत की आग ने इस बस्ती को जलाया है।''[1] यह बटवारे की भयावहता और खून–खराबे को यथार्थ रूप में उद्घाटित करता है। यह एक ऐसी रचना है जिसमें निम्न वर्ग और शहरी जीवन को चित्रित किया गया है। छोटे–छोटे क़स्बे के लोग जो आज़ादी की लड़ाई में एकजुट थे, वे हिन्दुस्तान पाकिस्तान के बटवारे में इस एकजुटता को खो बैठते हैं। देश के बँटवारे के साथ लोगों के हृदय में भी लकीरें खिंच जाती हैं। उपन्यास के पात्र रतन और मक़सूद जैसे हज़ारों लोगों ने आने वाली पीढ़ी के साथ जो गद्दारी, की उसकी कीमत इस देश को बहुत मंहगी पड़ी। सत्तार, सलमा, बच्चन और नसीबन का बलिदान भी इस राजनीतिक भूल को नहीं सुधार सका।

कमलेश्वर ने देश विभाजन की संवेदना को गहरे से अनुभव किया है। छोटे से क़स्बे के लोग जो कल तक न हिन्दू थे न मुस्लमान, सन् 1945 के पश्चात् मानवीय रिश्तों को भूलकर केवल हिन्दू और मुसलमान के दायरों में सिमट कर रह गये। उनका प्रेम, रोज़ी, भूत, भविष्य और वर्तमान अब पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के साथ बंध गया था। एक अदृश्य भय हर तरफ, हर क्षण व्याप्त है –

> ''तुमने मुझे बुलाया था ?
> नहीं तो।'
> 'तो मैं जाऊँ !'
> जाओ !
> इस तरह मैं नहीं जाऊँगा.....।'
> सलमा चुप रही।
> 'अगर पाकिस्तान बना तो तुम ... जाओगी ?
> सलमा हँस दी और अपनी बेहूदी बात पर सत्तार को भी झिझक लगने लगी।''[2]

स्वतंत्रता से पूर्व बँटवारे का यह भूत आम हिन्दुस्तानी के हृदय और मस्तिष्क पर हावी था। बँटवारे के बाद जब लोग इस भयावह वास्तविकता से परिचित होते हैं तो बहुत बड़ा झटका लगता है। सत्तार की आत्महत्या, इफ्तिखार का हाथरस में तांगा चलाना, ग़नी मिस्त्री का फिरोज़ाबाद में जाकर बस जाना ही ग़रीब मुसलमानों को हिन्दुस्तान में बँटवारे की नेमत के रूप में मिलता है।

'लौटे हुए मुसाफिर' के रूप में स्वतंत्रता के बाद जन्मी पीढ़ी में से कुछ ने अपने–अपने ठिकाने खोज लिए हैं और अधिकांश भटक

गए हैं। यह भटकन नई पीढ़ी को विरासत में मिली है। उपन्यास का अन्त लेखक ने नितान्त आदर्शवादी ढंग से किया है। लेखक ने स्वयं कहा है–''नसीबन खुशी से रो पड़ी थी। वे सब बच्चे बशीर, बाकर, रमज़ानी, फत्ते वग़ैरह जवान हो–हो कर लौटे थे। नसीबन उन्हें अपने साथ ले गई थी...उन निशानों के पास जो अब भी बाकी थे।''[3] कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' में उन अबोध लोगों की कथा को आधार बनाया है जो केवल अपनी रोज़ी–रोटी के लिए संघर्षरत थे, परन्तु सांप्रदायिकता की लहर में बह गये और न तो पाकिस्तान जा सके, न ही वापस अपने क़स्बे में लौट सके। अन्त में जो लोग लौटकर आये, वे मज़दूर बनकर ही आये।

कमलेश्वर की सूक्ष्म अनुभूति तथा संवेदना–जन्य प्रेषणीयता के कारण यह उपन्यास सफल बन गया है। डॉ0 सुरेश सिन्हा के शब्दों में–''लौटे हुए मुसाफिर' में आस्था आत्मविश्वास, कर्तव्यपरायणता, देशानुराग एवं दायित्व निर्वाह का जो उन्होंने महान् सन्देश दिया है, वह आज के परिप्रेक्ष्य में अत्यंत महत्वपूर्ण है और इसीलिए इस पीढ़ी के प्रकाशित उपन्यासों में कमलेश्वर का यह उपन्यास विशेष उल्लेखनीय हो जाता है।''[4] कमलेश्वर का जीवन के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण है। वे घोषित रूप में प्रगतिशील कथाकार हैं। यही कारण है कि इस उपन्यास में मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा, नए उभरने वाले मानवतावाद एवं मानवीय संवेदनशीलता का चित्रण सामाजिक सन्दर्भों के अन्तर्गत बड़ी कुशलता से हुआ है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि कमलेश्वर एक बस्ती को केन्द्र में रखकर आम आदमियों के सहारे साम्प्रदायिकता, अलगाव और विभाजन की समस्या के लिए ज़िम्मेदार कारकों को स्पष्ट करते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में मुस्लिम पात्र ही उन्होंने अधिक लिए हैं। सम्भवतः बस्ती के मुस्लिम मुहल्लों में ही कथावस्तु घटित होने के कारण ऐसा हुआ है। अन्य उपन्यासकारों में गुरुदत्त ने अपने उपन्यास 'देश की हत्या' में हिन्दू पात्रों की दृष्टि से अलगाव का विवेचन किया है। कमलेश्वर ने मुस्लिम पात्रों के माध्यम से साम्प्रदायिक समस्या की परतों को यथार्थ के धरातल पर उद्घाटित किया है। साम्प्रदायिक समस्या को उजागर करते समय वह तटस्थ रहते हैं। वह दोनों समुदायों की प्रतिक्रियावादी शक्तियों का पर्दाफाश करते हैं। आज इस देश में ऐसे ही आम आदमी का नाजायज़ फायदा स्वार्थी नेता उठा रहे हैं और नफ़रत की आग फैला रहे हैं। यह कार्य पढ़े–लिखे शिक्षित तथा अपने को आधुनिक कहलाने वाले हिन्दू और मुसलमान दोनों कर रहे हैं। साम्प्रदायिक समस्या के लिए अगर किसी को दोषी ठहराना है तो यासीन जैसे लीगी युवक और राम सेवक जैसे संघियों को ठहराना होगा। रतन, साई, मकसूद का तो ये लोग अपनी महत्वकांक्षाओं को पूरा करने के लिए उपयोग करते हैं। इस प्रकार की घृणात्मक विचारधाराओं के प्रचार–प्रसार से ही तो लोग आपस में घृणा करने लगते हैं। आम आदमी इनकी बातों में आकर लड़ते हैं, मरते हैं और राजनीतिज्ञों के लिए मंच तैयार करते हैं। जनसाधारण स्वार्थी राजनीतिज्ञों की महत्वकांक्षाओं..... की पूर्ति के लिए अपना सब कुछ लुटा देते हैं–''पता नहीं क्या हुआ था इस बस्ती को ऊँचे–ऊँचे इमली नीम के पेड़ों पर लम्बी–लम्बी बल्लियाँ लगाकर लीग और हिन्दू महासभा के झण्डे फहराए गए थे। घरों पर भी छोटे–छोटे 'ऊँ' और 'हरे झण्डे' नज़र आने लगे थे।''[5] धर्म का सहारा लेकर हिन्दू कार्ड और कभी मुस्लिम कार्ड खेला जाता है। साम्प्रदायिकता को बढ़ाने की पूरी ज़िम्मेदारी बिना किसी अतिशयोक्ति के राजनीतिज्ञयों और धर्म के ठेकेदारों पर है।

कहना न होगा कि प्रस्तुत उपन्यास में कमलेश्वर ने सांप्रदायिक समस्याओं के कारण बनते–बिगड़ते आपसी रिश्तों को बखूबी उद्घाटित किया है। इन्होंने न केवल उन कारणों पर ही विस्तृत प्रकाश डाला है जिनके कारण साम्प्रदायिक समस्या में वृद्धि हो रही है, बल्कि उन स्थितियों को भी उभारा है जिनमें मनुष्य साम्प्रदायिक समस्याओं से मुक्त हो सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने नसीबन के माध्यम से हिन्दू–मुस्लिम सांप्रदायिक समस्या को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। नसीबन के विचारों पर साई के विचारों का गहरा प्रभाव है। साई एक कम्युनिष्ठ है। अपनी प्रखर प्रगतिवादी चेतना के कारण कमलेश्वर ने उपन्यास में साई के माध्यम से वर्गवादी चेतना को उभारने का प्रयत्न किया है। सांप्रदायिक समस्या से छुटकारा पाने के लिए लेखक के पास एक ही उत्तर है वर्ग–चेतना, उपदेश नहीं, सुधार नहीं, धर्मो का समन्वय नहीं। यह उत्तर सही है अथवा ग़लत, यह तो आज कहना मुश्किल है। परन्तु इतना सच है कि इस समस्या की ओर देखने का लेखक का दृष्टिकोण एकांगी और पूर्वाग्रही है। वे विभाजन के मूल में भी आर्थिक संघर्ष को ही मानते हैं। यद्यपि विभाजन के लिए अनेक इकाईयाँ ज़िम्मेदार थीं। परन्तु दुर्भाग्य तो यह है कि उस समय के हिन्दू और मुस्लिम मज़हब के कटघरों में बन्द थे। उससे मुक्त होकर मात्र मनुष्यता की दृष्टि से सोचने का न किसी के पास वक़्त था और न किसी की इच्छा थी।

कमलेश्वर ने इस उपन्यास में मानवीय एवं आर्थिक पहलू को ही प्राथमिकता दी है जबकि धार्मिक अथवा राजनीतिक पक्ष को कम। कमलेश्वर का यह पूरा उपन्यास मानवीयता तथा संवदेनशीलता से परिपूर्ण है। भाषा की दृष्टि से यह एक अत्यन्त सफल लघु उपन्यास है। इस उपन्यास में कमलेश्वर ने आम–आदमी की भाषा का प्रयोग किया है।

सन्दर्भ सुची

1. कमलेश्वर, लौटे हुए मुसाफिर, समग्र उपन्यास, प्रथम संस्करण 2003, पृष्ठ 89
2. वही, पृष्ठ 108
3. वही पृष्ठ 153
4. डॉ0 सुरेश सिन्हा, हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास, प्रथम संस्करण, 1965, पृष्ठ 559
5. कमलेश्वर, लौटे हुए मुसाफिर, समग्र उपन्यास, प्रथम संस्करण, 2003, पृष्ठ 110